जगतराम एण्ड सन्स
मेन बाजार, गांधी नगर, दिल्ली-110031

मथुरादास की डायरी • मुद्राराक्षस

© मुद्राराक्षस

प्रकाशक

जगतराम एण्ड संस
IX/221, मेन बाजार, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण

1992

मूल्य

पचास रुपये

मुद्रक

अजय प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

MATHURADAS KI DIARY (Humour & Stire)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अनुक्रम

परनिंदा सुख उर्फ एरिस्ट्रोक्रेट झाड़ू	7
पुरस्कार प्रसंग	10
सावधान ! आगे जनवादी रेजीमेंट है	14
अध्यक्षता का आनन्द	19
अथ श्री दिल्ली पुलिस पुराणम्	23
काशी विश्वनाथ : शासकीय नियमावली	27
विधायक बिकाऊ हैं···!	32
आलोचना के खतरे	37
ऋणंकृत्वा चर्बी पिवेत	41
पड़ता सिद्धान्त	46
चुनाव चक्र और एकता	51
उत्तर प्रदेश का कीर्तिमान	55
व्यंग्यकार की मेख	59
गरीबी की रेखा के इधर और उधर	64
समीक्षा सुख	68
टेढ़ा उल्लू	72
बड़ा क्या है : सच्चा सुख या सत्ता सुख	77
हिन्दी की शुभचिन्तक	82
ब्लेड युग की साहित्यिक हरकतें	87
बड़े बनने का गुर !	91
भारत भवन से मथुरादास की अपील	96
कम्प्यूटर क्रान्ति	101
उपदेशक की जमीन	105

बोले, "मान्यवर, आपकी मुझ पर हमेशा कृपा रही है।"

तब गृहमन्त्री ने कहा, "मान्यवर, देखिए आप तो केन्द्रीय नेताओं से अक्सर मिलते रहते हैं। आप उनको बताइए कि मुख्यमन्त्री भ्रष्ट हो चुके हैं और प्रशासन ठप्प पड़ा हैं। मुख्यमन्त्री बनने लायक मैं ही सही व्यक्ति हूँ। केन्द्रीय नेताओं के कान में यह सब डालें।"

"मैं बलपूर्वक आपका समर्थन करूँगा।" विधायक ने कहा।

इस प्रकार आप देखिए कि छोटी-सी घटना से चतुर व्यक्तियों ने अपने न जाने कितने उल्लू तुरन्त सीधे कर लिये और एक मैं हूँ मथुरादास कि उधर 'सारिका' विशेषांक निकाले जा रही है और मैं अपना टेढ़ा उल्लू लिये अलग बैठा खींचतान किये जा रहा हूँ।

बड़ा क्या है : सच्चा सुख या सत्ता सुख

इस देश में जब आजादी की लड़ाई हो रही थी तो कई सिरफिरे लोग ऐसे भी थे जो शहीद हो गए। जैसे भगतसिंह, बिस्मिल, आजाद, सुखदेव, खुदीराम बोस और भी बहुत-से लोग। मथुरादास सोचते हैं, यह बुरा हुआ। वे जान न देते तो मन्त्री होते। उन्हें सत्ता सुख मालूम ही नहीं था, इसलिए सच्चा सुख शहादत में मानते रहे। सवाल यह है कि बड़ा क्या है? सच्चा सुख या सत्ता सुख? मथुरादास को लगता है, दूसरा सुख ही ठीक होता है। शहीद होने से फायदा क्या?

आप कहेंगे उनकी चिताओं पर हर बरस मेले लगेंगे। हर बरस मेले लगने का आश्वासन देकर किसी नेता से या मन्त्री से पूछिए, क्या वह मरने को तैयार है? वह आपको मार देगा। हाँ, वह दूसरा काम खुशी से कर सकता है। मेला लगा सकता है। शहीद दूसरा हो और मेला लगाने का काम आपको मिले तो इससे मजे की बात और क्या हो सकती है। बल्कि मेले में शहादत का भी आनन्द आ जाता है।

मथुरादास एक बार एक शहीद की समाधि देखने गए। वहाँ मेला सचमुच ही लगा हुआ था क्योंकि शहीद की, उस दिन जन्म-तिथि थी। वहाँ मन्त्री आये हुए थे। मंच पर सेठ मिलावट राम भी थे और एक बड़े जमींदार राजा कफन खसोट सिंह भी थे। सेठजी ने शहीद की मूर्ति बनाने के लिए एक लाख रुपया चन्दा दिया था और अब वे आगे पूरे एक साल तक सरसों के तेल में मोबिल ऑयल मिलाने वाले थे, क्योंकि पिछले एक साल से वे मसालों में घोड़ों की लीद सफलतापूर्वक मिला चुके थे। राजा साहब ने शहीद के नाम से एक ट्रस्ट बना दिया था जिसके दफ्तर में दरअसल चोरी की गई मूर्तियाँ जमा की जाती थीं। मन्त्रीजी ने बड़े भावविभोर होकर भाषण दिया। बोले, "देश के बच्चे-बच्चे को भगतसिंह और चन्द्रशेखर

आजाद बनना चाहिए।"

मथुरादास सोचते रहे, यह मूर्ख कह क्या रहा है ? भगतसिंह को अंग्रेजी सरकार ने फाँसी दी थी और चन्द्रशेखर आजाद को मुठभेड़ में मार गिराया था। अब अगर देश का बच्चा-बच्चा भगतसिंह बने तो फाँसी पाने के लिए कहाँ जाएगा ? क्या मन्त्रीजी यह जिम्मेदारी सँभालेंगे कि भगतसिंह बनने आए हर बच्चे को फाँसी चढ़ाएँ ? या चन्द्रशेखर आजाद बनने का इच्छुक व्यक्ति इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क के बजाय लन्दन के हाइड पार्क में जाए ? अगर हाइड पार्क नहीं जाया जा सकता तो क्या मन्त्रीजी कृपापूर्वक उस पर लोदी गार्डन में गोलियाँ चलवा देंगे ?

देश में अठारह-बीस करोड़ युवा हैं। इतने लोग तो शहीद बनेंगे। पर मन्त्रीजी के युवा बेटों में से एक आई० ए० एस० अफसर बन गया, एक ठेकेदार हो गया। तीसरा बेटा राहजनी की कला में माहिर है। एक बेटा सबसे चालाक निकला है। शहीदों की चिताओं पर हर बरस मेला वही लगाता है। वह 'शहीद मेला समिति' का अध्यक्ष है।

किसी समय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने नारा लगाया था—"तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।"

मन्त्रीजी के बेटे का नारा है—"तुम शहीद हो जाओ, मैं मेला लगाऊँगा।"

यह तो गनीमत है। वरना जब रोम जल रहा था, नीरो बाँसुरी बजा रहा था। मन्त्री पुत्र कह सकते थे—"तुम मरो, मैं मेला लगाऊँगा।"

शहीदों की चिता पर मेला लगता है तो बसों पर भरकर दूर-दूर से लोग बुलाये जाते हैं। बस का किराया सौ के बजाय तीन सौ लिखाया जाता है और बसें पचास आती हैं पर पैसे पाँच सौ के वसूल हो जाते हैं। मेले की स्मारिका निकलती है जिसमें शहीद के बजाय मन्त्रियों के चित्र और सन्देश होते हैं। मेले में दूकानें लगती हैं। दूकानों का किराया आता है। बाँस-बल्लियाँ गढ़ती हैं। मेला क्या, पूरा उद्योग होता है।

मथुरादास सोचते हैं, मेला तो पूरे देश में लगा हुआ है, काले बाजार का मेला, मुनाफाखोरी का मेला, धनकुबेरों के धन्धे का मेला, मन्त्रियों के भाषणों का मेला, डकैतों की लूट का मेला और एक बहुत भारी चिता यहाँ जल रही है जिसमें शहीद ला-लाकर जलाये जा रहे हैं। बेरोजगार शहीद, भूखे शहीद, नंगे शहीद, हरिजन शहीद, गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाले शहीद···

धीरे-धीरे हमारा जोर अब शहीद से हटकर चिताओं और मेलों में केन्द्रित होता जा रहा है। इससे क्या फर्क पड़ता है कि चिता बिस्मिल की है या आजाद की, मेला उत्तम होना चाहिए और मेला कमेटी पर अधिकार पक्का रहना चाहिए, बस।

पिछले दिनों सत्ताधारी दल ने एक अजीब काम शुरू कर दिया। चुनाव का टिकट देने से पहले वह नेताओं से एक प्रश्नोत्तरी हल कराता है। प्रश्नोत्तरी का भेद मथुरादास को अचानक ही मालूम हुआ। मथुरादास किताबों की एक दूकान में थे। तभी कुछ नेतानुमा लोग घबराये हुए आए। बोले, "बन्धु, स्वाधीनता संग्राम पर कोई किताब हो तो दीजिए···"

पुस्तक विक्रेता ने कुछ किताबें निकाल दीं। किताबें देखकर वे घबरा गए। घबराना था ही। जब से वे नेता बने थे, निष्ठुर किताबों से पीछा छूट गया था। पढ़ने के नाम पर वे अब सिर्फ बयान पढ़ते थे या पार्टी का घोषणा-पत्र। बल्कि विश्वविद्यालय में भी पढ़ना न पड़े इसलिए वे यूनियन के नेता बन लिए थे। मोटी-मोटी किताबें देखकर दुखी होते हुए बोले, "भाई, इतनी मोटी-मोटी किताबें पढ़ने का समय कहाँ मिलेगा ! कोई छोटी पुस्तिका हो तो बताएँ।"

इस बीच दूसरा नेता शायद ज्यादा ही जल्दी में था। बोला, "आपने पढ़ी ही होंगी। हमें कुछ मोटी-मोटी बातें बता दीजिए, जैसे महात्मा गांधी का पूरा नाम क्या था ? वे इन्दिराजी के भाई थे या बेटे ? नमक सत्याग्रह क्या था ? मतलब इस सत्याग्रह में नमक खाना छोड़ दिया जाता था या ज्यादा खाया जाता था ? भारत कब स्वतन्त्र हुआ था, अठारह सौ सत्तावन में या आगे-पीछे ? चौरी-चौरा काण्ड में फूलन ने कितने लोग मारे थे ? लाला लाजपतराय ने पहला मैच लाला अमरनाथ के विरुद्ध खेला था या पटौदी के विरुद्ध ? जरनैलसिंह भिंडरावाले ने जलियाँवाला बाग हत्या-काण्ड कब किया था ?"

नेताजी ने कागज-कलम पहले से ही तैयार रखी थी। उनका खयाल

था कि छोटी-मोटी बातें उन्हें जरा-सा भूल सी गई हैं, बाकी सब उन्हें मालूम हैं। पुस्तक विक्रेता जरा मसखरे निकले। उन्होंने एक बड़े नेता का नाम लेकर कहा कि उन्होंने एक कोचिंग कालेज खोला हुआ है। अगर वे लोग वहाँ चले जाएँ तो सारी बातें तुरन्त मालूम हो जाएँगी।

मथुरादास को लगा यह मामला मसखरी वाला नहीं, गम्भीर है। जब चुनाव टिकट के लिए प्रश्न-पत्र का रिवाज चल ही पड़ा है तो इसमें भी चतुर लोगों को काम बना लेना चाहिए। अब उन्हें बाकायदा कोचिंग कॉलेज खोल लेना चाहिए जिसका विज्ञापन कुछ यों होगा—'शर्तिया टिकट दिलवाने की गारण्टी', 'नेतागिरी की पूरी शिक्षा केवल एक मास में प्राप्त करें', 'एक सप्ताह में युवा नेता और दो सप्ताह में वरिष्ठ नेता बनाने का पाठ्यक्रम', 'कार्बाइन प्राप्त करने और सरकारी जमीन पर कब्जा करने के सरल उपाय' इत्यादि।

जब टिकट पाने के लिए प्रश्न-पत्र हल करने का रिवाज चल ही गया है तो इससे गैस पेपर भी छापे जा सकते हैं। थोड़ी-सी कोशिश की जाए तो कुछ ले-देकर पर्चा आउट भी कराया जा सकता है। ऐसे पर्चे की काफी बड़ी कीमत मिलती है।

अगर कुछ न हो तो नेतृत्व की इन परीक्षाओं में सामूहिक नकल की जा सकती है। जहाँ परीक्षा होनी हो वहाँ पर दो-चार तगड़े लोग लाउडस्पीकर सहित तैनात किये जा सकते हैं जो सवालों के जवाब माइक्रोफोन पर बोलते जाएँ। हाँ, ऐसी जगह परीक्षार्थियों के घुसने की प्रक्रिया नियन्त्रित करनी होगी। जो उचित शुल्क न दे, उसे अन्दर जाने से रोकना होगा। खैर, वह इन्तजाम हो जाएगा।

शिक्षा-पद्धति और राजनीति में बहुत-सी चीजें आज खासी समानान्तर हैं। बहुत-से मेडिकल कॉलेजों में दाखिले के लिए एक भारी रकम ले ली जाती है जिस कैपिटेशन फीस कहते हैं। इससे एक बड़ा लाभ यह होता है कि नीच और छोटे लोग इनमें नहीं घुस पाते। राजनीति में भी कैपिटेशन फीस चलती है। टिकट पाना है तो एक भारी रकम जमा करानी होती है। इससे हर ऐरा-गैरा-नत्थू-खैरा नेता बन जाए, यह मुमकिन नहीं होता है।

शिक्षा और राजनीति, दोनों ने ही उद्योग का रूप ले लिया है। मजे

की बात यह है कि यह कुटीर उद्योग भी है, बड़ा उद्यम भी और सरकारी उद्यम भी। पान-बीड़ी के खोखे की तरह हर शहर की हर बस्ती की हर गली के हर चौथे मकान में आपको नन्हा-मुन्ना कॉनवेंट स्कूल खुला मिल जाएगा। नामर्दी का शर्तिया इलाज करने वाले अस्पतालों की तरह शर्तिया इम्तहान पास कराने वाले कोचिंग कॉलेज भी मिल जाएँगे। जैसे हर सरकारी कारखाने में कुर्सियाँ ज्यादा, काम कम होता है, वैसे ही सरकारी स्कूलों में भी होता है। ठीक यही हालत राजनीति की है। यह कुटीर उद्योग भी होता है जो मुहल्ले में काम करता है। इसमें आदमी कमर में तमंचा खोंचकर घूमता है। बाद में यही उद्योग समूह का रूप धारण कर लेता है। तब वह तो हार पहने घूमता है, तमंचा लेकर उसके सहायक घूमते हैं। जब यही राजनीति सरकारी उद्योग बन जाती है तो इसमें सिर्फ घाटा दिखाया जाता है। दस करोड़ की खेती, पचास करोड़ के कारखाने, सौ करोड़ के होटलों का मालिक बनकर नेता शुद्ध खादी पहनता है और लोगों से कहता है वह मन्त्रीपद का वेतन नहीं लेगा क्योंकि उसने त्याग की कसम खायी है।

पंचतन्त्र की कहानियों की तरह इस सारी गाथा का एक उपदेश भी निकलता है। इस देश में आज दो तरह के लोगों की जरूरत है, एक तो वे जो शहीद होते रहें और उनकी चिताएँ जलाई जाती रहें और दूसरे वे जो चिता जलने के बाद वहाँ आएँ और मेला लगाएँ। मथुरादास यह भी बता देना चाहते हैं कि आपको मेला लगाने वाला बनने की कोशिश से बाज आना चाहिए, क्योंकि मेला लगाने का सर्वाधिकार सुरक्षित हो चुका है। हाँ, आप शहीद हो सकते हैं, होते आए हैं, होते रहिए। चिता का प्रबन्ध हो जाएगा, चिन्ता न कीजिए।